अध्याय 1

1. प्रेमचंद का व्यक्तित्व एवं कृतित्व:-

कथाकार प्रेमचंद बहुआयामी रचनाकार थे। प्रेमचंद हिंदी साहित्य के गौरव हैं। अगर हम हिंदी कथाकारों की बात करे तो प्रेमचंद के जीवन, व्यक्तित्व एवं कृतित्व को लेकर जितना आलोचनात्मक साहित्य लिखा गया हैं शायद ही उतना किसी और कथाकार को लेकर लिखा गया हो। यह सारा लेखन प्रशंसात्मक हो, ऐसा भी नहीं हैं क्योंकि मुंशी जी अपने समय काल में भी विवादस्पद बने रहे और आज के समय भी बने हुए हैं। इसका सीधा सा अर्थ लगाया जा सकता हैं की उनके जीवन व्यक्तित्व एवं कृतित्व में ऐसा कुछ तो जरुर हैं जो अनुकूल और प्रतिकूल दोनों तरह की प्रतिक्रिया उत्पन्न करता हैं।

प्रेमचंद के साहित्य लेखन की शुरुआत की बात आती हैं तो हमे लगता हैं साहित्यिक जीवन के लगभग प्रारम्भ से लिखा जाने लगा था, लेकिन उनके जीवन काल में उनके साहित्य को लेकर लिखी जाने वाली पुस्तक समीक्षा या आलोचना के रूप में भी या तो आलोचनात्मक लेखों के रूप में जो उसी समय की पत्र पत्रिकाओ में प्रकाशित थी। मुंशी जी के जीवनकाल उन पर लिखी गयी पहली पुस्तक के रूप में किसी रचना की बात होती हैं तो वह जनार्दन प्रसाद झा द्वारा लिखी गयी पुस्तक 'प्रेमचंद की उपन्यास कला हैं जो दिसम्बर 1933 में वाणी मंदिर, छपरा (बिहार) से प्रकाशित हुई थी। प्रेमचंद डॉ.राम विलास द्वारा उन पर लिखी दूसरी पुस्तक है जो 1941 में सरस्वती प्रेस बनारस से प्रकाशित हुई।

डॉ. रामविलास द्वारा लिखी गयी पुस्तक 'प्रेमचंद और उनका युग' उन पर लिखी हुई दूसरी आलोचनात्मक पुस्तक हैं जिसका प्रकाशन सन 1952 में हैं। रमेश वर्मा के सहयोग से 1947 में लिखी हुई यह तीसरी आलोचनात्मक पुस्तक हैं। गुप्त जी उसके बाद और आलोचनात्मक पुस्तक लिखी प्रेमचंद और उनका साहित्य 1951 तथा प्रेमचंद व्यक्ति और साहित्यकार 1961 हंसराज रहबर ने 1949

में प्रेमचंद :जीवन,कला और कृतित्व नाम से एक पुस्तक लिखा। इस पुस्तक को उन पर लिखी हुई चौथी आलोचनात्मक पुस्तक थी। यह पहले उर्दू में प्रकशित हुई,बाद में हिंदी में।

इस पुस्तक को उर्दू और हिंदी के आलावा अंग्रेजी और रुसी में भी प्रकशित किया गया इसका दूसरा संस्करण प्रेमचंद : जीवन,कला और कृतित्व के नाम से 1962 मे प्रकाशित हुआ। इससे यह स्पस्ट हैं की प्रेमचंद के महत्व को अधिकांश लोगों ने आसानी से जान लिया।

प्रेमचंद के बारे में जो बात निर्विवाद हैं वह यह हैं की वे भारतीय किसान जीवन के अनुपम कथाकर हैं। वे किसान जीवन के कथाकार बने थे गाँव की प्रकृति, संस्कृति और जिन्दगी के लगाव के कारण। इस साक्षात्कार में भी उन्होंने कहा है की 'मेरा बचपन गाँव में ही बिता और 1907 से 1914 से सैट वर्षों में मैं गाँव से ही जुड़ा रहा, इसलिए मुझे किसानों के प्रति आत्मीयता का अनुभव होता है। उनके सुख दुःख में मैं समरस हो सकता हूँ। इसका भी यही कारण किसानो से हार्दिक सहानुभूति के कारण प्रेमचंद स्वयं उन पर लिखते थे और दूसरों को भी किसान जीवन पर लिखने की सलाह देते थे। इस पुस्तक में इक़बाल बहादुर देवसरे का एक संस्करण है, जिसमे देवसरे ने लिखा है की एक मुलाकात में प्रेमचंद ने मुझसे कहा था "आप तो रियासत में हैं वहाँ किसानों का बुरा हाल हैं। जमीनदार और साहूकार उन्हें चूस रहे है। उन किसानो का कोई हमदर्द नही है उनकी हालत को सुधारना चाहिए।

1.1 प्रेमचंद का व्यक्तित्व:-

साहित्य जगत जिस व्यक्ति को मुंशी प्रेमचंद के नाम से जनता है दरअसल उसका नाम 'धनपत राय' था। प्रेमचंद ने हिंदी कथा साहित्य के ऐसे मानक प्रस्तुत किये जिनसे वह उपन्यास के सृजनात्मक उपलब्धियों में प्रतिमान बन गये। प्रेमचंद ने ये काम तब किया जब कहानी उपन्यास का शैशव था। उन्हें पूर्व से निर्मित मार्ग न मिलने के कारण नया मार्ग बनाने के लिए बिबस होना पड़ा। शायद इसलिए उनकी कहानी तथा उपन्यासों में एक बड़ा स्तर भेद देखने को मिटा हैं।

प्रेमचंद का जन्म 31 जुलाई 1880 में लमही नमक ग्राम में हुआ था जिसकी बनारस से दुरी 4 मिल थी। कलम के सिपाही कहे जाने वाले प्रेमचंद ने अपने 56 वर्ष के छोटे से जीवन में बड़े-बड़े संघर्ष झेले और कई कई उतराव चड़ाव से गुजरे। उनके पिता का नाम अजायब लाल तथा माता का नाम श्रीमती आनंदी देवी था। उनके पिता मुंशी का काम किया करते थे वह अपने माता पिता के चौथे संतान थे। पहले दो बहनों की मृत्यु हो चुकी थी तथा बड़ी बहन सुग्गी उनसे 6,7 साल बड़ी थी। श्रीवास्तव गोत्र और कायस्थ जाति के कुलीन परिवार में जन्मे प्रेमचंद को बचपन में लोग धनपत राय के नाम से बुलाते थे, और ताऊ जी का रखा हुआ नाम नवाब राय था जब वे सात वर्ष के थे तभी उनके सिर से ममता का छाया उठ गया। उस ज़माने के अनुसार प्रेमचंद के पिता ने दुसरी शादी कर ली। उसके कुछ ही वर्षो के बाद उनके पिता जी का भी देहांत हो गया, प्रेमचंद का विवाह कम ही उम्र में कर दी गयी थी। उनके पिता के देहांत के उपरांत पुरे परिवार के पालन पोषण करने की जिम्मेदारी प्रेमचंद पर आ गयी।

प्रेमचंद ने " *इब्तदाअन आठ साल तक फारसी पढ़ी फिर अंग्रेजी पढ़ी* ।[1] बनारस के क्वींस स्कूल से इंट्रेंस पास किया"। (इंद्रनाथ मदान सितम्बर 1934 पृष्ठ संख्या 182) धनपत राय लमही से सवा मील दूर मौलवी साहब से उर्दू और फारसी पढने जाते थे। वे गोरखपुर मिशन स्कूल से मिडिल पास की तब उनकी उम्र मात्र 14 वर्ष की थी। बनारस के क्वींस कालेज से उन्होंने 10 क्लास द्वितीय श्रेणी में उतीर्ण किया। अपने परिवार के आर्थिक स्थिति को देखते हुए 18,19 वर्ष की उम्र में अर्थात 1899 में मात्र अठारह रूपये के योग पर मिशन स्कूल चुनार गढ़ में सहायक अध्यापक नियुक्त हुए। इस तरह से उनका पदोन्नति होते होते एक दिन इलाहाबाद के माडल स्कूल में हेड मास्टर के पद पर नियुक्ति हुई।उसके बाद मई 1905 में कानपूर में तबादला हुआ। वहाँ पर उनका मासिक वेतन पच्चीस रूपये निर्धारित हुआ। प्रेमचंद के पहली पत्नी के बारे में सुना जाता हैं की उनकी सौतेली माँ के कारण उन दोनों में ताल मेल नहीं बैठती थी। इस बात को उनकी दूसरी पत्नी शिवरानी देवी स्वयं स्वीकारती हैं। प्रेमचंद की पहली पत्नी की

[1] मदान, इंद्रनाथ (सितम्बर 1934) पृष्ठ संख्या 182

मृत्यु 1904 में नहीं हुई। अपनी पुस्तक 'प्रेमचंद घर में' उन्होंने इस बात की पुष्टि भी की है। शिवरानी देवी बताती है की उनकी पहली पत्नी कई वर्षो तक जीवित रही । शिवरानी देवी से उनका काफी समय तक पत्राचार भी होता रहा। वह कैथी में पत्र लिखती थीं। उनके लिखे पत्र प्रेमचंद भी पढ़ते थे । शिवरानी देवी ने उन्हें लाने की कोशिश की किन्तु उन्होंने साफ़ इनकार कर दिया। वह कहती थीं कि जब मुंशी जी लेने आयेंगे तभी जाउंगी । यह तथ्य शांति शिवरानी देवी द्वारा लिखी गयी पुस्तक 'प्रेमचंद घर में' के अंतर्गत प्रस्तुत है।

प्रेमचंद अपनी पहली पत्नी के बारे में कुछ और ही बताते है । वह कहते है की उनकी पत्नी लंगड़ाकर चलती थी उस पर भूत प्रेत का साया था। प्रेमचंद एक जगह लिखते हैं 'मैं उनसे पहले खुश ही न था अब तो सूरत से बेजार हूँ । गालिबन अबकी जुदाई दायमी हो, खुदा करे ऐसा ही हो। मैं बिना बीवी के रहूँगा ।'[2]

प्रेमचंद के सौतेली माँ बहुत ही झगड़ालू प्रवृत्ति की थी । उन्ही के कारण प्रेमचंद की अपनी पहली पत्नी से न पटी । शिवरानी कहती है कि इसी कारण कई साल तक इनकी माँ से मेरी भी नहीं बनी। शिवरानी जी इस गृह कलह का उल्लेख करते हुए लिखतीं हैं "मेरी उनसे करीब आठ साल तक नही पटी, क्योकि उनके घर में शोरगुल बहुत ज्यादा था और वें उस शोरगुल की आदी नहीं थीं । प्रेमचंद घर संभाल नही पाते थे और गुस्सा बीवी पर उतारते थे ।

1908 में हमीर पुर जिले के महोबा क्षेत्र में जिला शिक्षा बोर्ड के सबइंस्पेक्टर नियुक्त हुए । यह सरकारी नौकरी थी । प्रेमचंद को यह सुकून भरा लगा कारण यह था कि यहाँ बहुत आज़ादी थी, बावजूद

गुलामी के (जून पृष्ठ संख्या 23)[3] 1896 में इंटर की परीक्षा द्वितीय श्रेणी में पास किया। फिर बी.ए. कि परीक्षा भी किसी तरह से पास की । प्रेमचंद एम्.ए.भी करना चाहते थे पर कर न सके ।

---

[2] मदान,इंद्रनाथ (जून १९०५) पृष्ठ संख्या

[3] वही पृष्ठ संख्या 23

एक तो सरकारी दूसरे शिक्षा विभाग की नौकरी! कभी यहाँ तो कभी वहाँ तबादला होता रहता था। प्रेमचंद नौकरी छोड़ने की इच्छा अपने कई लेखों में जताते हैं।

आठ फरवरी 1921 को गोरखपुर में महात्मा गाँधी द्वारा दिए गये भाषण से प्रभावित होकर पन्द्रह फरवरी 1921 को सरकारी नौकरी से त्याग पत्र दे दिया। अपने मित्र को इसकी सूचना 23 फरवरी को देते हुए लिखते हैं "प्रेस और अख़बार नवीसी और कुतुवंवीसी के सिवा मैं कोई दूसरा काम करने को काबिल नहीं। कपड़े बुनने को तैयार नहीं। कास्तकारी मेरे किए हो नहीं सकती ।"[4] (1 सितम्बर 1915 पृष्ठ सं.124 निगम) प्रेमचंद नौकरी से ज्यादा दिन पीछा नहीं छुड़ा पाए। मास्टर और मुंशी लेखक भला कब कहा कल-कारखानेदार हुए जो प्रेमचंद होते अंततः उन्हें फिर नौकरी पकडनी ही पड़ती हैं। 1922 में कानपूर के मारवाणी स्कूल में प्रधानाध्यापक बनते है। लेकिन इसके उपरांत 1924 को 'माधुरी' के संपादक बनने का आपर मिलता है,जिसे वह सहर्ष स्वीकार कर लेते है। लेकिन अपना पत्र निकालने की एक और आकांक्षा जन्म लेती है। 1930 में उन्होंने 'हंस' का प्रकाशन आरंभ किया, कार्यभार अधिक हो जाने के कारण उन्हें माधुरी का संपादन 1931 में छोडनी पड़ी। उसके बाद 1932 में 'जागरण' को अपना लेते हैं। अपने साहित्य के प्रकाशन के लिए 'सरस्वती' प्रेस की स्थापना पहले ही कर चुके होते है। 'हंस' और 'जागरण' घाटे में जाने के कारण जागरण को 1935 में ही बंद करना पड़ा तथा 'हंस' को उन्होंने भारतीय साहित्य परिसद को सुपुर्द कर दिया। कुछ समय चलाकर साहित्य परिषद् ने हंस का प्रकाशन बंद कर दिया और फिर कुछ वक़्त बाद 1936 की छमाही में प्रेमचंद ने उसे पुनः प्रकाशित करने की योजना बना कर उसका संपादन आरंभ किया।

प्रेमचंद का गृहस्थ जीवन तब सार्थक हुआ 1913 में उनकी बेटी का जन्म हुआ। अपनी बेटी कमला के जन्म के उपरांत उन्हें अपने परिवार की आर्थिक स्थिति की ओर ध्यान जाता हैं। उन्हें किताबो के रोयाल्टी से 300 रूपये प्राप्त होता हैं उस रूपये को वह सूद पर कर्ज दे देते हैं। लेकिन निगम

[4] वही (सितम्बर 1915 पृष्ठ सं 124

को बताना नही भूलते हैं। 1916 में उनके घर एक पुत्र का जन्म होता है जिसका नाम श्रीपत हैं उसके बाद 1919 में उनके दूसरे पुत्र मुन्नू का जन्म होता हैं। 1920 में ही मुन्नू की मृत्यु हो जाती हैं। इस समाचार को प्रेमचंद ने अपने मित्र निगम से कहते या बताते हैं "आज रात मुझ पर सानिहा (दुखो का पहाड़) गुजरा। मुन्नू मेरा बेटा इलाहाबाद से यहाँ आकर चेचक से ग्रसित हो गया, उस बीमारी ने मेरे बेटे को इस कदर अपने आगोश में जकड़ लिया कि उसकी मृत्यु हो गयी।"[5]

प्रेमचंद के तीसरे पुत्र अमृत राय का जन्म सन 1921 में हुआ उसके बाद 1924 में फिर एक लड़की का जन्म हुआ जो फिर 3 महीने के बाद मर गयी। प्रेमचंद अपना सारा जीवन संयम और सादगी से परिपूर्ण जीवन जीया ।सादा एवं सरल जीवन के आदि प्रेमचंद हमेशा ही मस्त रहते थे। वह अपने जीवन में विषमताओ से लेकर लगातार खेलते रहते थे। वे एक हसमुख प्रकृति के व्यक्ति थे। विषमताओ भरे जीवन में हसोड़ होना एक बहादुर का काम है। प्रेमचंद अपने मित्रों के दुःख से दुखी और सुख से सुखी होते थे। उनके हृदय में गरीबों एवं पीड़ितों के लिए सहानुभूति का अथाह सागर था। इन्हें ग्रामीण जीवन से उत्कट प्रेम था। वह हमेशा सादे पोशाक में ही जीवन जीते थे। अपनी जीवन का अधिकांश समय वे गाँव में बिताया एवं गुजारे। वे बाहर से साधारण और अंदर से गम्भीर इन्सान थे। प्रेमचंद बाहरी आडम्बरो एवं दिखावे में विश्वास नही रखते थे। उन्हें अपने जीवन में विलासिता की कभी लालसा नहीं हुई। वह भी अपना काम स्वयं ही करना चाहते थे।

प्रेमचंद को अपने जीवन के प्रति अगाढ़ आस्था थी। लेकिन वह कभी ईश्वर के प्रति आस्थावादी नहीं बन सके। प्रेमचंद गीता के कर्मयोगी व्यक्ति भी थे। कर्महीन जीवन को उन्होंने कायरता और पलायन माना हैं। प्रेमचंद विनम्रता की साक्षात प्रतिमूर्ति थे। उन्हें प्रशंसा से बहुत संकोच होता था। प्रेमचंद ने

[5] वही पृष्ठ संख्या 104

बनारसी दास चतुर्वेदी को एक पत्र लिखा था ; " मैं हिंदी का अकेला कहानी लेखक नहीं हूँ। कम से कम आधे दर्जन लोग और हैं जो मुझसे अच्छा लिखते है और मेरा कोई दूसरा नहीं है।"

प्रेमचंद जी साहित्यकार को संस्कृति और सभ्यता का अलम्बरदार मानते थे। उन्हें साहित्यकारों की अशिष्टता और अभद्रता से घृणा थीं। वे नहीं चाहते थे की कोई भी साहित्यकार अशिष्टता अभ्रद्रता का आचरण अपनायें। साहित्य के मोर्चे पर प्रेमचंद कर्मयोद्धा थे। अर्जुनस्य प्रतिज्ञा 'द्वे न दैन्य च पलायनम' युक्ति के मुर्तिवन्त धनुधारी है। उनका कहना था 'जब तक कलम और दिमाग काम करता है तब तक दौलतमंद न हो सका तो अब क्या होऊंगा आदमी की कमजोरी है वह जरा तो वेफिक्री चाहता है, वर्ना कुछ छोड़कर मरे तो क्या और खाली हाथ गये तो क्या ? ऐसा कर्मयोद्धा पुरे विश्व साहित्यजगत में मिलना दुर्लभ सा जान पड़ता है। प्रेमचंद कहते थे कि कर्मयोद्धा का बुजुर्ग नहीं होता। प्रेमचंद इसी के सहारे सदा नौजवान बने रहे।

प्रेमचंद शोषण और वर्गवाद का बखूबी समझते थे। प्रेमचंद भी कही न कही शोषण के शिकार व्यक्ति थे। इसलिए वह समाज के वर्गवाद एवं शोषण के खिलाफ थे। प्रेमचंद वर्गवाद एवं शोषण के प्रति लिखने के लिए ही नौकरी से त्याग पत्र दिया था। वह इससे संबंधित बातों को उन्मुख होकर लिखना चाहते थे। उनके अनुसार अर्थोपार्जन सबके लिए अनिवार्य होता जा रहा था। अर्थोपार्जन के बिना जिन्दा रहना बहुत ही मुश्किल है। प्रेमचंद ने शोषित वर्ग को उठाने के लिए हर संभव प्रयास किया। उन्होंने आवाज़ लगाई 'ऐ लोगों! जब तुम्हें संसार में रहना है तो जिन्दों की तरह रहो, मुर्दों की तरह रहने से क्या फायदा। प्रेमचंद को साहित्य सेवा से बड़ी उम्मीदे थी। वह अपने समय में हिंदी एवं उर्दू दोनों में लिखते थे। इसके जरिये से देखा जाय तो उनके किताबों की क्रय-विक्रय अधिक होना चाहिए थी परिणाम स्वरूप लाभ होना चाहिए था। लेकिन इस हिंदी जगत जाति के बंजर क्षेत्र से सिवाय हानि के मिलना ही क्या था। अश्क जी को 9 जुलाई 1936 में लिखें पत्र को देखने से मालूम होता है कि उन्हें सिवाय निराशा के और कुछ प्राप्त नहीं हुआ। उन्हें अपना जीवन संघर्ष व्यर्थ सा जान पड़ता हैं। "हिंदी में वही कैफियत है जो उर्दू

में हैं किताबें नहीं बिकती है। पब्लिशर कोई नई किताबें छापते नही। कलम पर जिन्दा रहना मुश्किल जान पड़ता है। बस किसी अख़बार में जाने के सिवा और कोई रास्ता नजर नहीं आता। अगर आदमी का काबू हो तो किसी देहात में जाकर एक दो जानवर पाल ले, कुछ खेती कर ले और जिन्दगी गाँव वालों की खिदमत में गुजार दे। शहर में रहकर खासकर बड़े शहरों में तो सेहत जिन्दगी, सब कुछ तबाह हो जाती है। शहरी जीवन को प्रेमचंद ने बखूबी महसूस किया था। इसलिए इन्होने ग्रामीण समाज के समस्या को उठाया वह जानते थे की शहर में कुछ भी नही है।

साहित्यिक संसार में मिलने वाले पुरस्कारों की उन्हें आकांक्षा नहीं थी। वे पुरस्कार को प्रतिष्ठा का आभार नहीं समझते थे। वे हमेशा पुरस्कार को न लेने के समर्थक थे। उन्होंने एक पत्र में जैनेन्द्र से कहा भी है : पुरस्कारों पर विचार करना मैंने छोड़ दिया। अगर मिल जाए तो ले लूँगा, पर इस तरह जिस तरह पड़ा हुआ धन, आय या प्रसाद जी या जाए तो मुझे समान हर्ष होगा। आपको ज्यादा जरूरत है, इसलिए ज्यादा खुश रहूँगा।

भारतीय डाक द्वारा 31 जुलाई 1980 को मुंशी प्रेमचंद के स्मृति में व उनके जन्मदिवस के अवसर पर 30 पैसे मूल्य का एक डाक टिकट जरी किया गया। गोरखपुर के जिस स्कूल में वे शिक्षक थे,वही पर प्रेमचंद साहित्य संस्थान की स्थापना की गयी है। प्रेमचंद से संबंधित वस्तुओं का एक संग्रालय भी है। जहाँ पर उनकी एक प्रतिमा भी लगाई गयी है।

साहित्यकार अपने युगबोध के अपने विचारों और अपने अनुभवों को वाणी देता है और चला जाता है, किन्तु जब यह वाणी,समाज के एक वृहद अंश के चिंतन का आधार बन जाती है, तब संस्कृति के रूप धारण कर लेती है।प्रेमचंद के अनुभव और विचार आज भी आम आदमी के व्यापक संदर्भ को प्रकट करते है।

प्रेमचंद अपने समय में सबसे अधिक लोकप्रिय हुए। लेकिन देखा जाए तो प्रेमचंद की लोकप्रियता आकस्मिक नहीं है। इसके मूल में भारतीय समाज,जीवन और सभ्यता और भारतीय आत्मा

से उपलब्ध होने वाले वह प्राणतत्व है। जो प्रेमचंद के भारतीय साहित्य को एक विकसित समाज की गौरवपूर्ण संस्कृति का रूप देता है। प्रेमचंद अपने समय समाज को बहुत करीब से आत्मसात करने वाले एक महान साहित्यकार थे।

प्रेमचंद के महान व्यक्तित्व के अनेकों पहलू है। यहाँ उन्हीं का उल्लेख किया गया है। जिन्हें मैंने आत्मसात किया है। अपने अंतिम समय के एक वर्ष पूर्व मुंबई की फ़िल्मी दुनिया में समय व्यतीत किया। उसके बाद वे फिर बनारस व लखनऊ चले आये, जहाँ पर उन्होंने अनेक पत्र पत्रिका का संपादन किया और साहित्य संसार में साहित्य सृजन करते रहे। 8 अक्टूबर 1936 को प्रेमचंद साहित्य संसार को अलविदा कह गये। लेकिन उनका साहित्यिक योगदान आज भी हमे आलोकित करता है।

कृत्तित्व-:

उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचंद एक अमर कथाशिल्पी है। अमर कथाशिल्पी और प्रसिद्ध उपन्यास सम्राट का उनका साहित्य लेखन कालरूपी है, रचनाओं का क्षेत्र विस्तृत है।उनकी भाषा आम आदमी की भाषा है। प्रेमचंद ने अपना प्रारम्भिक रचनाये उर्दू में लिखी लेकिन कुछ वर्षों बाद हिंदी में लिखना प्रारम्भ किया। इनकी 'सोजेवतन' नामक क्रांतिकारी रचना ने स्वाधीनता संग्राम में ऐसी हलचल मचाई की अंग्रेजी सरकार ने इनकी कृति को जब्त कर लिया।

प्रेमचंद एक ऐसे कथाकार हैं, जो ग्रामीण जीवन और वहाँ की समस्याओं को अपने रचना के विषय बनाया था। "प्रकृति की सौन्दर्य स्थली में बैठकर प्रेमचंद ने किसी सौन्दर्य को अपनी रचना में नही उतरा। वे तो भूख, गरीबी अन्याय,सामाजिक कुरीतियों आदि से इतना क्षुब्ध और बेचैन रहते थे कि प्रकृति का सौन्दर्य उनके लिए नगण्य था।" (आनंद स्वरूप श्रीवास्तव) इस बात की पुष्टि इस लिए हो रही है कि प्रेमचंद जब महोबा में रहते थे तो वहाँ पर प्राकृतिक सौन्दर्यता थी। प्रेमचंद अपने ग्रामीण परिवेश के लेखन को पुष्टि करते हुए कहते है: "मैं गाँव–गाँव घूमता रहा,इसलिए मुझे किसानों के प्रति आत्मीयता का अनुभव होती है।" प्रेमचंद का साहित्य सामाजिक परिवर्तन का एक ऐसा अस्त्र है जो सामाजिक

सच्चाइयों का विवरण और चित्रण प्रस्तुत करता है। उनकी सादगी और मानवीय भावना ने न केवल उन्हें सार्थक सर्वोत्कृष्ट ग्राम-कथाकार बनाया बल्कि नगरवासियों की समस्याओं पर भी उनकी दृष्टि थी। इसलिए हम उन्हें मानवता के कथाकार भी कह सकते है। कथा सम्राट प्रेमचंद के साहित्य में समाज के प्रवाहों का जबल प्रतिबिम्ब झलकता हैं। प्रेमचंद एक ऐसे साहित्यकार हैं जो अपने युग का साथ चलते रहे और युग के बाद भी चलते नजर आते हैं। प्रेमचंद के कृतियों से हिंदी से अनुवाद का प्रचलन शुरू होता है। उनकी रचना हिंदी,उर्दू,अन्ग्रेजिऔर अन्य भारतीय भाषाओँ के साथ साथ विदेशी भाषाओँ में भी उनकी सर्वाधिक रचनायें अनुदित हुई। प्रेमचंद ने किसी समय अपने भाषण में कहा था- "जीवन में एक नई सुन्दरता की तलाश लेखकों को प्रेरित किया कि उस सामाजिक व्यवस्था को उखाड़ फेंके, जिसमे एक व्यक्ति हजारों व्यक्तियों पर अत्याचार कर सकता है, मानवीय आत्मसम्मान उन्हें प्रेरित करेगा कि वे पूंजीवाद,सैनिकवाद तथा साम्राज्यवाद के विरुद्ध विद्रोह का झंडा ऊँचा करे। फिर हमे इस सबके विरुद्ध अपनी गैर –रजामंदी को कागज पर व्यक्त करके संतुष्ट नही हो जाना चाहिए बल्कि हमे एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था की स्थापना के लिए सक्रीय रूप से काम करना चाहिए जो, सुंदरता,सुरुचि तथा मानवीय महिमा का निषेध नहीं करती।"

प्रेमचंद को आम आदमी के चेहरा भी कहा जाता हैं। हिंदी साहित्य में कोई भी कथा आन्दोलन न हुआ जिसमे उनकी कथाओं का समावेश न हुआ हो। हिंदी साहित्य संसार प्रेमचंद का सदा ऋणी रहेगा। भारतीय साहित्य के प्रतिनिधि रचनाकार प्रेमचंद ने अपने लेखकीय जीवन में कहानी, उपन्यास, नाटक, निबंध, पुस्तक समीक्षा आदि विभिन्न विधाओं में साहित्य सृजन किया परन्तु उनकी विशेष ख्याति 'कथा सम्राट' के रूप में ही हुई। साहित्य की विभिन्न विधाओं में से जीवनी ही एक मात्र ऐसी विधा है जिसमे प्रेमचंद की रचनाएं संप्रति मात्र उर्दू में प्राप्त होती \ प्रेमचंद की निम्नलिखित कृतियाँ उल्लेखनीय हैं –

उपन्यास – प्रेमा 1907,रूठीरानी 1907,सेवासदन 1918,वरदान 1921,प्रेमाश्रम 1922,रंगभूमि 1925, कायाकल्प 1926,निर्मला 1927,गबन 1931,कर्मभूमि 1933, गोदान 1936, मंगलसूत्र।

प्रेमचंद द्वारा लिखे गये उपन्यास का उनके द्वारा किया गया हिंदी रूपान्तर- असरारे मआविद 1903, से 1905, के बीच इसका हिंदी रूपान्तर 'देवस्थान रहस्य 1905,हमखुर्या व हमसवाब से 1906,प्रेमा का रूपान्तर हुआ। किराना 1907, से गबन 1931,में उर्दू उपन्यास में रूपान्तर - जलवाए ईसार 1912,से वरदान 1918,में रूपान्तर बजारे हुस्न 1917,से सेवासदन 1918,में रूपान्तर। गोशाएं आफियत से प्रेमाश्रम 1922,में रूपान्तर। चौ गाने हस्ती से रंगभूमि में रूपान्तर हुआ। ये उपन्यास उर्दू से हिंदी में रूपान्तर किये गये।

देवस्थान-

इस उपन्यास में मंदिरों और वीर्यों में फैले भ्रष्टाचार, पाखंड पर चोट करता है।

रूठी रानी-

जैसा कि इस उपन्यास का ही नाम है रूठीरानी। इस उपन्यास में यह दर्शाया गया है की पहले के राजा लोग किस तरह से अपनी दुश्मनी निकालते है। लेकिन नायिका उन्हें बचाने की भरपूर कोशिश करती है और सफल भी होती।

सेवासदन-

प्रेमचंद ने इस उपन्यास में विशेष रूप से वेश्याओं की समस्याओं को उठाया है। वे वेश्यावृति को समाज का कलंक और कोढ़ समझते थे और इसका अंत चाहते थे। उन्होंने समस्या का भावुकतापूर्ण सुधारवादी हल उपस्थित किया है और विधवाश्रम तथा सेवाश्रम इस समस्या का कोई हल नहीं हैं; लेकिन यह बात स्पष्ट कर दी है कि वेश्याएं कोई विधाता की ओर से नहीं बनी आती बल्कि यह निष्ठुर समाज के कारण ही हमारी बहु –बेटियाँ वेश्याएं बनने पर मजबूर करता हैं। एक म्युनिसिपल मेम्बर कुंवर साहब ने दालमंडी बनने का कारण बताते हुए कहते हैं- "जिस समाज में अत्याचारी जमींदार रिश्वत राज्य-कर्मचारी , अन्यायी महाजन, स्वार्थी बन्धु आदर और सम्मान के पात्र हों, वहाँ दालमंडी क्यों न आबाद

हो ? हराम का धन हरामखोरी के सिवा और कहा जा सकता है? जिस दिन नजराना,रिश्वत और सूद का अंत होगा उसी दिन दालमंडी उजड़ जायेगी।

इस उपन्यास के प्रमुख पात्र – कृष्णचन्द्र, उसकी बेटी सुमन और शांता,रामदास,गजाधर,भोली वेश्या पद्म सिंह वकील,उसकी पत्नी सुभद्रा, विट्ठलदास,सदन सिंह,पिता मदन सिंह,आदि पात्रों के माध्यम से समाज के कुरीतियों पर प्रहार किया हैं।

वरदान-

प्रेमचंद ने इस उपन्यास में प्रेम एवं विवाह के बीच जो चित्र है उसे उभारने की कोशिश की है। प्रेमचंद इस उपन्यास में कथानक लम्बा और जटिल सा प्रतीत होता है। इस उपन्यास में पात्र बहुत से है लेकिन कोई भी हाड़ मांस के मनुष्य की तरह उभरकर सामने नहीं आता। सभी लेखक के हाथ की कठपुतलिया बनकर रह गये है। जब लेखक उनकी उपयोगिता नहीं देखता तो उनकी अकारण ही मृत्यु करा देता है। घटना प्रवाह भी स्वाभाविक नहीं है। कमलाचरण विरजन के प्रभाव से सुधर जाता है लेकिन प्रयाग पहुंचकर फिर आवारा और द्रुष्ट बनकर कुचक्र में फंसकर मर जाता है। उपन्यास के आरंभ में प्रतीत होता है कि प्रताप अर्थात बाला जी आदर्श देश भक्त बनकर देश सेवा के लिए जीवन अप्रित करेगा लेकिन यह सब कुछ नहीं होता। आरम्भ में वह दुर्बल चरित्र का ईर्ष्यालु युवक है जो बाद में प्रयाग जाकर बहुत प्रसिध्द हो जाता है और विरजन को देखकर संयासी बनता है। यह सब अचानक हो जाता है जैसे मानों कोई देवी का वरदान हो।

प्रेमाश्रम-

प्रेमाश्रम उपन्यास 1922 की रचना है। यह उपन्यास विशेष रूप से किसानों और जमींदारों के बारें में लिखा गया है और इसमें यथार्थ की मात्र भी सेवासदन से अधिक है। प्रेमशंकर का नये विचार प्रेमचंद

के नये विचार है। वे देश की जनता को रुढ़िवादी अंधविश्वास को त्यागकर नये विचार नये शिक्षा ग्रहण करने के लिए प्रयत्न करते है। प्रेमचंद औरों की तरह किसानों को मुर्ख और आलसी नहीं समझते थे। प्रेमचंद के कथानुसार प्रेमचंद इस उपन्यास का आदर्श पात्र है। वह किसानों और पीड़ित जनता से सच्ची सहानुभूति रखता है और ज्वालासिंह से कहता है – " जमीन उसकी है, जो उसे जोतों" लेकिन किसानों को वह यह जमीन अहिंसात्मक ढंग याने हृदय परिवर्तन से दिलाना चाहता है; इसलिए वह क्रांति का पथ छोड़कर प्रेमाश्रम द्वारा किसानों की सेवा करने का मार्ग अपनाता है। वह न सिर्फ अपने आदर्शों और सिद्धांतों के लिए त्याग कर सकता है बल्कि पुरानी मान्यताओं जो अनुभव वे गलत साबित हो, उन्हें छोड़ देने के लिए तैयार रहता है। प्रेमशंकर प्रेमचंद ही का प्रतिरूप है और उसकी असंगतिया प्रेमचंद की अपनी असंगतियाँ है।

रंगभूमि-

सूरदास इस उपन्यास का आदर्शपात्र है। वह एक भला आदमी है और दूसरों के लिए बड़े से बड़ा त्याग करने को तैयार है। वह भीख मांगकर जीवन बिता रहा है और अपनी जमीन गाँव के पशुओं के लिए छोड़ रखी है। जानसेवक से बड़ी रकम का प्रलोभन मिलने पर भी वह इसे नहीं बेचता। प्रेमचंद ने इस उपन्यास में वर्तमान समाज की सब स्तरों को उधेड़कर सामने रख दिया। क्लर्क साम्राज्य का प्रतीक है। ऐसे लोगों के होते अदालतें ढोंग है, कानून और वकील ढोंग है। इस परद्धि के रहते जनता को न्याय नहीं मिल सकता पूंजीवाद और कारखानेदारी का बढ़ता इस युग का भी एक सत्य है। अगर इसके अतिरिक्त कोई और भी सत्य है तो वह इसके सामने टिक नही सकता। यद्यपि प्रेमचंद स्वयं जनसेवक का सिगरेट का कारखाना लगाता है और पांडेयपुर उखड़ जाता है। यदि इसके मुकाबले में प्रेमचंद सूरदास के आदर्शवादी की जीत दिखाते तो शायद वह ठीक न होता।